ISSN: 3107-3557 (Online)

हिन्दी गद्य के समीक्षात्मक आधार एवं उपन्यास

Dr. D. M. Rathod
Associate Professor in Hindi
Smt. B. V. Dhanak College,
Bagasara

प्रत्येक वस्तु के परखने और उसके गुण-दोष तय करने की प्रवृत्ति हरेक व्यक्ति में स्वाभाविक रूप से पाई जाती है। ज्ञात अथवा अज्ञात रूप से प्रत्येक मनुष्य किसी वस्तु के लिए" अच्छी है, या बुरी है, या इस कक्षा की है" इस प्रकार का कोई-न-कोई न मत निश्चित करता है। प्रकारांतर से समीक्षा भी स्थूल रूप से यही काम करती है। समीक्षा विभिन्न रूपों की विशिष्ट व्याख्या कर उनके सात्विक स्वरूप में प्रस्तुत करती है। उसे शिल्प के संपर्क से उत्पन्न परेशानुभूति की भौतिक व्याख्या माना जा सकता है। समीक्षक विश्लेषण करता है, वह हमारे मस्तिष्क में उन तत्त्वों की चेतना उत्पन्न करता है, जो किसी साहित्यिक या कला-रचना अथवा उसके किसी अंश को रसमय या नीरस बनाते हैं। काव्य की विशेषताओं का सामान्य नाम देने का, अर्थात् सामान्य रूप में प्रस्तुत करने का नाम ही साहित्यिक समीक्षा है।

साहित्य क्षेत्र में, रचना को पढ़कर उसके गुण और दोषों की समीक्षा करना और उसके संबंध में अपना मत प्रकट करना समीक्षा कहलाती है। यह समीक्षा काव्य, नाटक, उपन्यास, निबंध आदि सभी की हो सकती है, यदि हम साहित्य को जीवन की व्याख्या स्वीकारें तो समीक्षा को उस व्याख्या की समीक्षा मानना पड़ेगा। किसी ग्रंथ की समीक्षा करने के समय हम ग्रंथ और उसके कर्ता का वास्तविक अभिप्राय समझना चाहते हैं और तब उसके संबंध में अपनी कोई संमति स्थिर करना चाहते हैं। दूसरों ने किसी ग्रंथ या उसके रचनाकार की जो समीक्षा की हो, उससे भी हम लाभ उठा सकते हैं। समीक्षा से दो काम होता है। एक तो किसी कवि या लेखक की कृति की विस्तृत व्याख्या की जाती है और दूसरे उसके संबंध में कोई मत स्थिर किया जाता है।

अंत में कहा जाए तो समीक्षा का प्रधान स्थान साहित्य के विविध पक्षों की समीक्षा, सूक्ष्म मुआयना ही है, और हम साहित्यिक समीक्षक से यही आशा करते हैं कि उसे विद्वान होना चाहिए और किसी भी साहित्यिक विषय पर अधिकार पूर्वक विवेचन करके उसके गुण- दोष प्रदर्शन के साथ उस साहित्यिक कृति या विषय पर अपना निर्णयात्मक मत प्रकट करना चाहिए। लेकिन सामयिक काल में हम समीक्षा-साहित्य के अंतर्गत केवल उपर्युक्त प्रकार की समीक्षा को ही ग्रहण नहीं करते इसलिए साहित्य के विषय में लिखे गए संपूर्ण समीक्षात्मक, विश्लेषणात्मक व्याख्यात्मक साहित्य को भी निग्रहित किया जाता है।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि साहित्य के क्षेत्र में समीक्षात्मक, विश्लेषणात्मक अथवा निर्णयात्मक दृष्टिकोण से ग्रंथों के अभ्यास द्वारा उस पर प्रत्यक्ष या बाहरी रूप से मत प्रकट करना ही समीक्षा है।

समीक्षा का अर्थ :

वस्तुगत रोचकता या अरोचकता खोजने की प्रवृत्ति मानव मात्र में स्वाभाविक में पाई जाती है। प्रवृत्ति मनुष्य को हर वस्तु की समीक्षा करने के लिए प्रेरित करती है। "मनुष्य जिस प्रकार आत्मतृष्टि के लिए कला से आस्वाद प्राप्त करना चाहता है उसी प्रकार कला विषयक जिज्ञासा को तृप्त करने हेतु वह उसकी समीक्षा भी करने और सुनने को उत्सुक रहता है।

मनुष्य मात्र की जिज्ञासा में समीक्षा की अनिवार्यता देखी जा सकती है।"

समीक्षा की व्याख्या और मूल्यों के निर्माण की प्रक्रिया कलाकृतियों के बाद आरंभ होती है। शिल्प कृतियों को देखकर मनुष्य उसके रोचक या असुन्दर होने की बातें करने लगता है। इस सुन्दरता का आधार विवेक होता है। यह रोचकता क्या है, इसकी सर्वमान्य परिभाषा दे पाना दुष्कर कार्य है; लेकिन विवेक और अहसास से हम वस्तुओं के गुणों का विश्लेषण करने लगते हैं। सौन्दर्य अनेक प्रकार से सामने प्रकट हो सकते हैं। ताल सौन्दर्य का प्रधान गुण है। यह विषय-वस्तु और उसकी अभिव्यक्ति दोनों में मौजूद रहता है। अनुभव से हमारी बुद्धि को लय तत्व का ज्ञान होता है और उससे शिल्प कृति के सौन्दर्य का बोध पाने पर, आनंद की प्राप्ति होती है। यह लय तत्व वस्तु अथवा कलाकृति के रूप, रंग आदि में अन्विति का बोध कराती है। इस सौन्दर्य से प्राप्त आनंद में नवीनता होनी चाहिए। "इस दृष्टि से सौन्दर्य का दूसरा गुण नवीनता माना जा सकता है। सीधी लकीर की अपेक्षा टेढ़ी लकीर अधिक सुंदर प्रतीत होती है। इसी को 'वक्रता समझते हैं। यह वक्रता सौन्दर्य का तीसरा गुण है। इसके साथ-साथ सुन्दरता का प्रभाव जिस गुण से हमारे मन पर जाता है, वह है गम्भीरता। गंभीरता से साहित्यकार की अनुमति की सच्चाई का परिचय मिलता है। नदी की अपेक्षा सागर में गंभीरता अधिक होती है, अतः सागर की गंभीरता का सौंदर्य अधिक गहरा जाता है। विशालता भी सौंदर्य का प्रमुख गुण है। छोटी पहाड़ी की अपेक्षा विशाल पर्वत की सुंदरता तुरंत मन को आकर्षित कर लेती है। इसलिए लय, नवीनता, वक्रता, गंभीरता और भव्यता वे आधार है जो सौंदर्य को नापने में कामयाब होते हैं। इन्हीं गुणों की तलाशी में किसी कलाकृति की समीक्षा संभव हो सकती है।

"सौन्दर्य -मूल के साथ 'नीति-मूल्य' भी किसी साहित्यिक रचना के लिए महत्त्वपूर्ण है। लेकिन साहित्य का निर्माण समाज सापेक्ष होता है, इसलिए नीति मूल्य की अपेक्षा उचित नहीं है। "परन्तु नीति परिवर्तनशील वस्तु है, प्रत्येक युग और काल के नीति-मूल्य अलग हो सकते हैं। किसी समय सती-प्रथा प्रतिष्ठा का आधार मानी जाती थी, परंतु आज यह अमानवीय व्यवहार समझा जाता है। मूलत: सौंदर्य और नीति दोनों का परिचय विवेक से होता है, अतः इनमें विरोध पैदा करने और एक दूसरे को विपरीत दिशा में खींच ले जाने से समीक्षा की निष्पक्षता नहीं रहती। हिन्दी साहित्य में सुधारवादी कविता का आधार नीति-मूल्य मान लिए जाने से उसमें शुष्कता आ गई। इसी प्रकार छायावादी समीक्षा केवल सौंदर्य और प्रभाव पर आधारित होने से कल्पनाओं में उलझ गई। प्रगतिवादी समीक्षा में वर्ग-संघर्ष की व्याख्या करने पर अधिक बल दिया गया इसलिए सौंदर्य और नीति दोनों में मन-मुटाव आ जाने से समीक्षा का यह तरीका अधिक समय तक ना रह सका। इस प्रकार सौंदर्य और नीति का यथास्थिति अपनापन ही समीक्षा का वास्तविक आधार है।

रोचकता वस्तुगत होती है या व्यक्तिगत ? अभी सौंदर्य के विषय में जो पाँच गुण बताए गए, उनसे सौंदर्य का वस्तुगत होना सार्थक हुआ है, लेकिन सौंदर्य से प्राप्त होने वाला आनंद व्यक्तिगत होता है सौंदर्य से प्राप्त होने वाला आनंद व्यक्तिगत होता है। सौंदर्य से प्राप्त आनंद की मात्रा व्यक्तिगत क्षमता पर निर्भर करती है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि साहित्य समीक्षा का बिंदु साहित्यिक कृतियों के सौंदर्य की व्याख्या करना है। साथ ही, सुंदरता के अपकर्षक तत्त्वों की ओर ध्यान दिलाकर कृति के स्थान की भी चर्चा की जाती है। अतः समीक्षा का काम व्यवहारिक पृष्ठभूमि

पर आलोच्य की व्याख्या करना भी है। " यह काम सौंदर्य और नीति मूल्यों के आधार पर तटस्थता के साथ किया जा सकता है। कृति के विश्लेषण द्वारा रचना की सर्वांगीण व्याख्या प्रस्तुत करना और मूल्यांकन से सामाजिक अभिरुचि को उचित दिशा की ओर लेना, इस दोहरे कार्य की पूर्ति में समीक्षा का स्वरूप निहित है।"

साहित्य सृजन में के क्षेत्र में समीक्षा अप्रत्यक्ष रूप में कुछ अन्य महत्त्वपूर्ण कार्य भी करती है। इससे साहित्यिक अराजकता पर नियंत्रण और सत-साहित्य के प्रचार में सहयोग मिलता है। समीक्षा के माध्यम से हम जान पाते हैं कि साहित्य के अथाह सागर में से क्या ग्रहण करना है और क्या त्यागना है। इससे उन दिशाओं का भी बोध मिलता है। जिनसे साहित्यिक कृतियों के रसास्वादन की समस्या सुलझ जाती है। समीक्षा के माध्यम से, युग- युगीन साहित्यिक रचनाओं में अभिव्यक्त मानवीय संस्कृति का कारण कार्यमूलक विकासात्मक रूप भी प्रस्तुत किया जाता है, परंतु समीक्षा का कार्य दोष निकालना नहीं है। दोष-दर्शन का बिंदु सौंदर्य के समर्थन हेतु ही होना चाहिए। कई बार किसी काव्य कृति में विषय-वस्तु, पात्र, छंद, अलंकार, भाषा, बिंब विधान,रस, ध्वनि के आधार पर उसकी शल्यक्रिया करना ही समीक्षा समझ ली जाती है। परंतु जब तक काव्य रचना में सौंदर्य की गरिमा और समाज- सापेक्षता का प्रभाव है, काव्यांगों की भित्ति पर उसका विवेचन निरर्थक होगा। "किसी कृति में काव्यांगों की उपस्थिति मात्र से वह साहित्यिक रचना नहीं बन जाती" यदि ऐसा मान लें तो आयुर्वेद वाड़मय को भी काव्य के अंतर्गत रखना पड़ेगा। इसलिए समीक्षा, साहित्य- सृजन को भी दिशा बोध करती है।"

साहित्य समीक्षा के विषय में विद्वानों ने अनेक प्रकार के विचार व्यक्त किये हैं। उनका कहना है कि समीक्षा हमारी उत्सुकता जगाकर हममें ज्ञान की ज्योति का प्रसार करती है, यह साहित्य अध्ययन में सहायता देती है और साहित्य के प्रभाव को तीव्र करने में सहायक है, परन्तु समीक्षा की एक उपयोगिता और भी है कि यह लेखक के लिए उपयुक्त पाठक वर्ग प्रस्तुत किया करती है और इसके माध्यम से पठन-पाठन के लिए उचित वातावरण तैयार होता है। समीक्षा के माध्यम से समाज की साहित्यिक रुचि का संशोधन और परिमार्जन होता रहता है। समीक्षा सामान्यतः उन व्यक्तियों के लिए महत्त्वपूर्ण है जिनके पास कृतियों को पढ़ने का अवकाश नहीं। "कुछ लोग का जीवन इतना व्यस्त होता है कि वे नहीं जान पाते कि इस समय साहित्य के क्षेत्र में कौन-सा लेखक महत्त्वपूर्ण कार्य कर रहे हैं। उनके पास मूल ग्रन्थ पढ़ने का अवकाश ही नहीं रहता। समीक्षा थोड़े ही समय में साहित्य क्षेत्र के नवीन प्रकाशनों तथा प्राचीन मूल ग्रन्थों में उनकी गति बना देती है।

समीक्षा को आलोचना, समालोचना तथा काव्यशास्त्र शब्दों से भी सम्बोधित किया गया है। आलोचना शब्द का सामान्य अर्थ निन्दा के रूप में प्रचलित है, अतः इससे समीक्षा की समग्र भावना का लोप नहीं होता, इसलिए आलोचना शब्द का समीक्षा के रूप में प्रयोग अधूरा-सा लगता है। समालोचना शब्द में आलोचना की अपेक्षा कुछ व्यापकता अधिक नजर आती है। सामान्य पाठक इस शब्द के प्रयोग से थोड़ा-सा अधिक प्रभावित होने लगता है, लेकिन काव्यशास्त्र शब्द में शास्त्र पद के प्रयोग से गरिमा बढ़ जाती है और हम विचार करने लगते हैं कि काव्यशास्त्र और समीक्षा दो अलग विधाएं हैं। हमारे देश में दर्शनशास्त्र, धर्मशास्त्र आदि शब्दों के वजन पर काव्य शास्त्र की तस्वीर बड़ी दिखाई देने लगती है। यह काव्यशास्त्र शब्द काव्य और शास्त्र दो शब्दों से बना है। काव्य तो

ISSN: 3107-3557 (Online)

साहित्यकार द्वारा वर्णित कृतियों को कहते हैं और शास्त्र के विषय में कहा गया है- शासनात् शंसनात् शास्त्र।" अर्थात् व्यवस्थित, रूप में कथन होने से कोई भी ज्ञान शाखा शास्त्र कहलाती है। योग का व्यवस्थित कथन योग्य शास्त्र है, धर्म का नियमबद्ध कथन धर्मशास्त्र है। इसी प्रकार काव्य साहित्य का व्यवस्थित उपदेश काव्यशास्त्र साहित्य शास्त्र है। दूसरे शब्दों में साहित्य समीक्षा ही काव्यशास्त्र है। काव्य क्या है, इसका बिंदु क्या है, इसके प्रयोजन कौन से हैं, काव्य कृतियों के उपकारक और अपकर्षक तत्त्व क्या होते हैं, इन सबका उपदेश, समीक्षा या काव्यशास्त्र में किया जाता है। प्रधानता: साहित्य समीक्षा के सिद्धांत पक्ष को काव्यशास्त्र समझ लिया गया है।" काव्यशास्त्र में साहित्य के सिद्धांत ही तो स्थिर किए जाते हैं और इन सिद्धांतों के निर्माण में व्यवहारिक समीक्षा से सहायता मिलती है। इसलिए समीक्षा और काव्यशास्त्र को पर्याय मानना चाहिए।"

समीक्षा की परिभाषा :

समीक्षा की व्याख्या करते हुए डॉ.श्यामसुंदरदास ने लिखा है- "साहित्यिक क्षेत्र में ग्रंथ को पढ़कर उसके गुण-दोष की विवेचना करना और उसके संबंध में अपना मत प्रकट करना।"

समीक्षा के कार्य और प्रभाव को स्पष्ट करते हुए बाबू गुलाब राय कहते हैं कि- "समीक्षा का मूल आशय रचना का सभी दृष्टिकोण से आस्वाद कर पाठकों को इस प्रकार के रस में सहायता देना, उनकी रुचि को परिमार्जित करना एवं साहित्य की गतिविधि तय करने में सहायता करना है।"

पाश्चात्य विद्वानों ने समीक्षा की अलग-अलग परिभाषाएँ प्रस्तुत की है। ड्राईडन के मतानुसार "आलोचना वह कसौटी है जिसकी सहायता से किसी रचना का मूल्यांकन किया जाता है। "मैथ्यू आर्नोल्ड कहना है-आलोचक को तटस्थ भाव से वस्तु के वास्तविक स्वरूप के ज्ञान न का अनुभव प्रचार करना चाहिए। आलोचक की सबसे बड़ी विशेषता है- तटस्थता। 'आइ.ए. रिचर्ड्स' मूल्य निर्धारण को समीक्षा की प्रमुख प्रवृत्ति कहा है। डॉ.जॉनसन की दृष्टि में आलोचना का कार्य है विवेक के आलोक में जो दिखाई दे, उसका उद्घाटन करना और सत्य के निर्देश में जो निर्णय हो, उसका व्याख्यान करना है।

अंग्रेजी के प्रसिद्ध कार्लायल के अनुसार-" समीक्षा कृति के प्रति अद्भुत आलोचक की मानसिक प्रतिक्रिया का प्रतिफल है"

समीक्षक के गुण:

समीक्षक का कार्य अत्यंत कठिन और अप्रिय होता है, संसार में बड़े-बड़े साहित्यकार, राजनीतिज्ञ, नेताओं और क्रांतिकारी तथा सुधारकों के स्मारक स्थापित किए जाते हैं। परंतु किसी समीक्षक के सम्मान में कोई स्मारक निर्मित किया गया हो, ऐसा हमें ज्ञात नहीं। परंतु समालोचक का कार्य कितना महत्वपूर्ण, आवश्यक और साथ ही कठिन तथा अप्रिय है, यह सभी स्वीकार करते हैं। इसी कारण उच्च कोटि का समीक्षक ही अपने कर्तव्य को समझता हुआ इस क्षेत्र में अवतरित हो सकता है। सत्य तथा असत्य साहित्य के विवेचन तथा वर्गीकरण के साथ वह साहित्य में असुंदर तथा सुंदर की खोज भी करता है और साहित्य के आनंद के मूल में कार्य करने वाली विभिन्न प्रवृत्तियों का अन्वेषण भी करता है। चाहे समीक्षक का संसार आदर न करें, तथापि वह पथ -प्रदर्शन और सत्य असत्य के विवेचन के कारण साहित्य में विशेष महत्त्वपूर्ण पद का अधिकारी है।"

विकासमान व्यक्तित्व :

समीक्षक के सामने कोई रचना समीक्षा हेतु आती है तो पहले यह उस रचना के काव्य-पक्ष और

शिल्प-पक्ष का परिचय प्राप्त करता है, यह उसके साक्षात का क्षण है। दूसरी ओर उसे जागरूक रहना है कि उसके पूर्वाग्रह, उसकी दृष्टि को धुंधली न कर दें। इस कार्य में सफलता के लिए समीक्षक में विकासमान व्यक्तित्व का होना आवश्यक है।" समीक्षक में निष्पक्षता होनी चाहिए, उसमें निष्पक्षता का भाव हो, तो वह सही तरीके से अपने आप को ढाल सकता है। किसी एक विचारधारा का आश्रय लेकर समीक्षा करने पर वाद और अराजकता उत्पन्न हो जाती है।

समीक्षक सेतु के समान :

पाठक किसी साहित्यिक कृति में डूबता-उतरता है, पर वह उन कारणों पर समुचित प्रकाश नहीं डाल सकता जिन्होंने उसे कृति के प्रति अनुराग- विराग दिया है। साहित्य और विचारों के क्षेत्र में, रुचि के परिष्कार तथा आस्वाद के परिवेश निर्माण में समीक्षा की आवश्यकता सदैव रही है और भी रहेगी।"

समीक्षक में सौन्दर्यानुभूति :

समीक्षक में सौन्दर्यानुभूति की क्षमता एक महत्त्वपूर्ण गुण है। व्याख्या, आलोचना, टीका, टिप्पणी करना आवश्यक है, परन्तु तत्त्व के बिना सारी व्याख्याएँ निरर्थक हो जाएगी। साहित्य का चरम बिन्दु तो आनंदानुभूति प्रदान करना है। सौन्दर्यानुभूति से आनंदानुभूति प्रकट हो सकती है"

विद्वता :

समीक्षा का बड़ा गुण है। साहित्य समीक्षक को साहित्य की संपूर्ण समस्याओं का विशेषज्ञ होना चाहिए। आलोच्य साहित्य के इतिहास तथा उसके विभिन्न युगों की सामान्य विशेषताओं से उसका विशेष परिचय होना चाहिए। पुस्तक या कलाकार की रचना के गुण -दोष विवेचन के लिए आवश्यक तीखी दृष्टि उसमें तभी प्राप्त हो सकती है, जब उसमें विद्वता हो।"

समीक्षा के प्रकार :

उपर्युक्त परीक्षण से यह स्पष्ट हो जाएगा कि समीक्षा साहित्य का एक प्रधान अंग है और जिस साहित्य में समीक्षा का अंग पूर्ण विकसित न हुआ हो वह साहित्य आज के युग में अपूर्ण और अविकसित ही समझ जाएगा। आधुनिक युग में समीक्षा साहित्य का क्षेत्र बहुत विस्तृत हो चुका है, साहित्य के विविध अंगों का सूक्ष्म परीक्षण और अनेक मूल्य निर्धारण के अलावा उसके मूल में कार्य कर रही सूक्ष्म प्रवृत्तियों का पृथक्करण भी समीक्षा का ही कार्य है।

आत्मप्रधान समीक्षा :

इसमें समीक्षक आलोच्य विषय का विवेचन करते हुए उसमें इतने तल्लीन या उससे इतने विमुख हो जाते हैं कि परीक्षण को त्यागकर, भावुकता में चले जाते हैं। आलोच्य रचना का विषय उसके भावों का आधार बन जाता है। ऐसी समीक्षा इसी कारण रचनात्मक साहित्य का अंग बन जाती है। इससे समीक्षक अलग अनुसंधान पद्धति को न अपनाकर अपनी रुचि अथवा आदर्श के अनुरूप ही आलोच्य-ग्रंथ की समीक्षा कर अपना निर्णय देता है। इस समीक्षा के समर्थक यह कहते हैं कि समीक्षा के लिए इससे बढ़कर और क्या प्रमाण हो सकता है कि रचना हमको अच्छी लगी या बुरी। इसलिए ऐसे आलोचक किसी शास्त्र का आधार न लेकर आलोच्य रचना के अपने ऊपर पड़े हुए प्रभावों तथा अपने विचारों का ही सहारा लेते हैं। वह एक प्रकार की सत्-असत् विवेक-बुद्धि में विश्वास रख अपनी ही रुचि को अंतिम प्रमाण मानते हैं। अनेक विद्वान इस आत्मा प्रधान आलोचना को विशेष उपयुक्त नहीं मानते क्योंकि उनके अनुसार इससे आलोच्य विषय का पूर्ण ज्ञान नहीं हो पता। हिंदी में जैनेंद्र, शांति प्रिया त्रिवेदी आदि इसी प्रकार के समीक्षक हैं। ऐसी समीक्षाओं का सबसे बड़ा दोष यह है कि इन्हें

समझने के लिए एक दूसरी समीक्षा पुस्तक चाहिए। जब तक उनकी विवृत्ति न हो, तब तक यह पाठकों की समझ में नहीं आती। केवल प्रभाव को समझने में ही जब इतनी कठिनाई है, तब रचना की रचना-विधि या कला-विधान तथा उसमें बंधी हुई अन्य बातों को कैसे समझा जा सकता है।"

सैद्धान्तिक समीक्षा :

समीक्षा का नाता जीवनानुभूतियों से है। अस्तित्व के विभिन्न क्रिया-व्यापारों, प्रभावों और परिणाम के सम्यक समीक्षा हेतु कतिपई नियमों का विधान किया जाता है। समीक्षा की प्रक्रिया भी निर्धारित आधार पर पूर्ण होती है। यह आधार ही नियमबद्ध होकर सैद्धांतिकता को प्राप्त करते हैं। पंडित सीताराम चतुर्वेदी ने सिद्धांत शब्द का अर्थ व्यक्त करते हुए बताया है कि किसी विषय के निरूपण का तात्त्विक आधार प्रस्तुत करना सिद्धांत है। मानक हिंदी कोश के अनुसार किसी विषय पर तर्क-वितर्क, विचार विमर्श आदि के उपरांत निश्चित किया गया मत सिद्धांत है। स्पष्ट है कि परंपरागत तर्क-बुद्धि पर प्रमाणित होकर ही कोई आस्था या मान्यता सिद्धांत का रूप ग्रहण कर लेती है। सिद्धांत निर्माण की पृष्ठभूमि सम्यक् अनुसंधान तर्क पूर्ण विश्लेषण, प्रमाण बद्ध निष्कर्ष और सार्वजनिक सहमति से युक्त होती है। सिद्धांत ही परंपरा अनुभव और समर्थन द्वारा परिपुष्ट होकर शास्त्र का रूप धारण करते हैं। सिद्धांत से शास्त्र बनने की संपूर्ण प्रक्रिया युग की बृहत सीमा पर घटित होती है। सिद्धांत के पर्यायवाची अनेक शब्दों का प्रचलन है-धारा मापदंड प्रतिमान परंपरा, मत, मूल्य, धारणा, स्थापना, परीक्षा आदि।

उपन्यास शब्द की व्युत्पत्ति एवं विश्लेषण :

साहित्य संसार में उपन्यास की व्युत्पत्ति से पहले हमारे आनंद के उपकरण केवल नाटक और कविता थे। लेकिन इधर नवीन युग में हमारे साहित्य में उपन्यासों और कहानियों का ही शासन है। आधुनिक युग में साहित्य के विभिन्न अंगों में से उपन्यास को जितनी प्रसिद्ध उपलब्ध हुई है, उतनी अन्य किसी को नहीं। बड़े-बड़े रचनाकार भी कहानी, उपन्यास तथा गाथा-रचना करके जीवन की गंभीर समस्याओं पर विचार करते हुए साहित्य के इसी अंग द्वारा यश प्राप्त करते हैं। साहित्य संसार में उपन्यास की उत्पत्ति क्रांतिकारी सफल हुई है।

उपन्यास हमारी कल्पना-शक्ति के लिए दुरूह नहीं उसके लिए विशिष्ट बौद्धिकता की भी आवश्यक नहीं। इसी कारण उनकी लोकप्रियता तीव्र गति से बढ़ी। उपन्यासों में मनोरंजक उपकरण की अपेक्षा मानसिक पृथक्करण और सामाजिक निरीक्षण की मात्रा अधिक है। प्रारंभ में उपन्यासों की रचना केवल मनोरंजन के लिए ही की जाती थी, वहाँ आज व्यक्ति, समाज और उनकी बौद्धिक तथा नैतिक धारणाओं के विश्लेषण के लिए ही उनकी सृष्टि हो रही है।"

साक्षात हिन्दी उपन्यास हिन्दी-साहित्य के लिए एक नई उपलब्धि है। 'उपन्यास' शब्द का प्रयोग जिस अर्थ में आज ग्रहण किया जाता है, वह मूल 'उपन्यास' शब्द से अलग है। प्राचीन साहित्य में उपन्यास शब्द का प्रयोग आजकल के उपन्यास के अर्थ में नहीं होता था। संस्कृत-लक्षण ग्रंथों में इस शब्द का प्रयोग नाटक की संधियों के उपभेद के लिए हुआ था।

संदर्भ सूची :

1. गुप्ता, डॉ.रामनिवास, हिन्दी साहित्य समीक्षा, राजकमल प्रकाशन दिल्ली, 2000, पृ.13
2. डॉ.श्यामसुन्दरदास, साहित्यलोचन, राजकमल प्रकाशन दिल्ली, 2000, पृ. 203

3. तिवारी, डॉ.यतीन्द्र, काव्य शास्त्र, राजकमल प्रकाशन दिल्ली, 2003, पृ. 21
4. गुप्त, डॉ.गणपतिचंद्र, साहित्यिक निबंध, हिन्दी प्रचारक संस्था वाराणसी, 1665, पृ.67
5. मल्लिक, सुमन, साहित्य विवेचन, राजकमल प्रकाशन दिल्ली, 1668, पृ.306
6. शर्मा, देवेन्द्रनाथ, पाश्चात्य काव्यशास्त्र, लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद, 2001, पृ.91
7. गुप्त, डॉ.शान्ति स्वरूप, पाश्चात्य काव्यशास्त्र के सिद्धांत, लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद, 1662, पृ.33
8. जैन, डॉ.निर्मल, पाश्चात्य साहित्यचिंतन, भारत प्रकाशन दिल्ली,1681, पृ.93
9. गुप्त, डॉ.ओमप्रकाश, साहित्य-शास्त्र, चिंतन प्रकाशन, कानपुर, पृ.31
10. डॉ.जवाहरसिंह, हिन्दी के आँचलिक उपन्यास की शिल्पविधि, रीगल बुक डिपो प्रकाशन दिल्ली, पृ.22